ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

वर्णोच्चारण में प्राणवायु का महत्त्व

बीरबल यादव

प्रवक्ता, संस्कृत, सीताराम समर्पण महाविद्यालय, नरैनी (बाँदा)

बिना वायु के वर्णोच्चारण असम्भव है। ऐसे अनेक वाद्ययन्त्र भी हैं, जिनमें वायु के द्वारा संगीतध्वनि उत्पन्न होती है जैसे पिस्टन, हारमोनियम, बाँसुरी आदि। इसी तरह प्राणवायु श्वास के रूप में भीतर जाकर निःश्वास रूप में निकलती हुई उच्चारण अंगों की सहायता से भिन्न–भिन्न वर्णों की उत्पत्ति करती है। फेफड़े से बाहर आती हुई प्राणवायु मुँह या नासिका से बाहर निकलती है। बाहर निकलती हुई प्राणवायु ही वर्णोत्पत्ति का मूल हेतु ह। वर्णोत्पत्ति की सामान्य प्रक्रिया का प्रतिपादन करते हुए **पाणिनीयशिक्षा** में कहा गया है –

''आत्मा बुद्ध्या समेत्यार्थान्मनोयुङ्क्ते विवक्षया
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारुतम्।
सोदीर्णो मूर्ध्न्यभिहतो वक्त्रमापाद्यमारुतः
वर्णाञ्जनयते तेषां विभागः पञ्चधा स्मृतः।।''[1]

आपिशलिशिक्षा तथा **सूत्रात्मकपाणिनीयशिक्षा** में भी इसी तथ्य का प्रतिपादन किया गया है।[2]

उपर्युक्त वर्णनों से यह स्पष्ट होता है कि वर्णोच्चारण प्राणवायु के बिना नहीं हो सकता। अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि प्राणवायु तो हमेशा आती जाती है तो वर्णोत्पत्ति भी हमेशा होनी चाहिये। वायु सर्वत्र व्याप्त होती है, इसलिए जहाँ–जहाँ वायु है, वहाँ–वहाँ वर्णोत्पत्ति होनी चाहिए, लेकिन ऐसी स्थिति नहीं है। इसी सन्दर्भ में **ऋग्वेदप्रातिशाख्य** में कहा गया है कि वक्ता में वर्णोच्चारण की चेष्टा होने पर प्राणवायु स्वरयन्त्र के संवृत या विवृत स्थिति के अनुसार नाद अथवा श्वास हो जाती है–

''वायुः प्राणः कोष्ठ्यमनुप्रदानं कण्ठस्थ खे विवृते संवृते वा।
आपद्यते श्वासतां नादतां वा वक्तीहायाम्।।''[1]

इससे यह स्पष्ट होता है कि वर्णोच्चारण में वक्ता की चेष्टा की भी महत्त्वपूर्ण उपयोगिता है।

वर्णोत्पत्ति की प्रक्रिया

व्याकरण तथा भाषा–विज्ञान के क्षेत्र में वर्णों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वैदिक भाषा, लौकिक संस्कृत या व्यावहारिक प्रयोग – सभी में वर्णों का प्रयोग होता है। वर्णों के ज्ञान से पद का ज्ञान होता है, पदों के ज्ञान से वाक्य बनता है, वाक्य बनने से ही भाषा का प्रयोग होता है। वर्णों की उत्पत्ति की प्रक्रिया को निम्न विवेचन के आधार पर इस प्रकार अभिव्यक्त किया जा सकता है –

पूर्व में यह विवेचित किया जा चुका है कि वक्ता द्वारा प्रेरित वायु समुचित उच्चारणांगों तथा वक्ता के प्रयत्न से युक्त होकर वर्णोत्पत्ति करती है। मात्र इतने विवचन से जिज्ञासा का पूर्ण सम्बन्ध नहीं होता,

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

अनेक प्रश्न उपस्थित होते हैं कि वायु कैसे वर्णोत्पत्ति करती है ? वर्णोत्पत्ति में कौन–कौन सी क्रियाएँ होती हैं ? इनका समुचित विवेचन शिक्षाग्रन्थ करते हैं, इसी तथ्य को प्रतिपादित करते हुए **आपिशलिशिक्षा** में कहा गया है कि ''जब प्रयत्न प्रेरित प्राणवायु नाभिदेश के ऊपर भ्रमण करती हुई उर आदि स्थानों से होती हुई मुख के भीतर स्थित स्थानों के पास प्रयत्नपूर्वक लायी जाती है तथा उसका प्रयत्न अनुकूल स्थानों से टकराव होता है, तब उस टकराव के परिणामस्वरूप वह वायु ध्वनि में परिवतित हो जाती है'' –

> **''तत्र नाभिप्रदेशात् प्रयत्नप्रेरितः प्राणो नाम वायुरुर्ध्वमाक्रामन्नुरः प्रभृतीनां स्थानानामन्यतमस्मिन् स्थाने प्रयत्नेन विधार्यते। स विधार्यमाणो वायुः स्थानमभिहन्ति। तस्माद् स्थानाभिघाताद् ध्वनिरुत्पद्यत आकाशे सा वर्णश्रुतिः।।''**[1]

पाणिनीयशिक्षा में वर्णोत्पत्ति प्रक्रिया का विवेचन करते हुये स्पष्ट किया गया है कि, ''वक्ता में बोलने की इच्छा होने पर सबसे पहले आत्मा वक्ता के द्वारा कहे जाने वाले अर्थों को एकत्रित करता है एवं उनका (अर्थों का) सम्पर्क बुद्धि से करता है, बुद्धि उन अर्थों को मन से संयुक्त कराती है, मन कायाग्नि को धक्का देता है और कायाग्नि के द्वारा शरीर में स्थित वायु प्रेरित करायी जाती है, अतः कायाग्नि प्रेरित वायु फेफड़े में विचरण करती हुई **''मन्द्र''** नामक ध्वनि को, कण्ठ में पहुँचकर **''मध्यम''** ध्वनि को, सिर में पहुँचकर **''तार''** नामक ध्वनि उत्पन्न करती है। इतनी क्रिया के बाद वायु मूर्धा से टकराकर लौटती हुई मुख में आकर तालु आदि स्थानों को प्राप्त करके वर्णों को उत्पन्न करती है।''[2]

व्यासशिक्षा में भी इसी प्रक्रिया से युक्त तथ्य को प्रतिपादित किया गया है।[3]उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि वक्ता में बोलने की इच्छा होने पर आत्मा बुद्धि को प्रेरित करता है कि इसका उच्चारण करना गलत है या सही। बुद्धि सही उच्चारण के लिए मन को प्रेरित करती है, मन कायाग्नि को प्रेरित करता है तथा कायाग्नि वायु को प्रेरित करती है वही वायु फेफड़े, कण्ठ, शिर तथा मुँह में पहुँचकर अनेक प्रकार की ध्वनियो को उत्पन्न करती है।

जब किसी व्यक्ति के भीतर बोलने की इच्छा उत्पन्न होती है, तब कायाग्नि द्वारा प्रेरित वायु में एक विशेष हलचल होने लगती है, ऐसी स्थिति में वायु वक्ता द्वारा इच्छा किये गये वर्णोच्चारण के लिए फेफड़े से बाहर निकलकर श्वासनली में अग्रसर होने लगती है। वक्ता जिस वर्ण के उच्चारण की इच्छा करता है, उस वर्ण से युक्त गुण वायु में उसी समय आ जाते हैं, जब वह फेफड़े में ही स्थित रहती है। उक्त क्षमता से युक्त होकर वायु श्वासनली से होते हुये सबसे पहले स्वरतन्त्रियों के समीप पहुँचती है। स्वरतन्त्रियाँ वायु के क्षमता के आधार पर उनके अनुकूल मार्ग प्रदान करती हैं, जैसे जब वायु में घोष वर्णों के उच्चारण की क्षमता रहती है तब स्वरतन्त्रियाँ एक–दूसरे के नजदीक आ जाती हैं, परिणामस्वरूप कण्ठविवर बन्द–सा हो जाता है एवं वायु सघोष बन जाती है। इसी तरह अघोष वर्णों के उच्चारण की क्षमता स युक्त वायु के लिए विपरीत स्थिति उत्पन्न होती है। स्वरतन्त्रियाँ स्वरतन्त्र में स्थित होती हैं अर्थात् स्वरयन्त्र ही वह प्रथम अंग है जिसमें स्थिति स्वरतन्त्रियों के माध्यम से वायु को सर्वप्रथम श्वास तथा नाद रूप में विकृत करके, उसे ध्वनि रूप में परिवर्तित होने योग्य बनाकर स्थान और करण के सम्पर्क में प्रेषित किया जाता है। स्थान तथा करण वायु को उसके गुणों के आधार पर विकृत करके वर्ण का स्वरूप प्रदान करते हैं।

इससे स्पष्ट होता है कि श्वास और नाभि वर्णोत्पत्ति के अंग हैं तथा स्वरतन्त्रियों के बदलती हुई स्थिति के अनुसार उनकी उत्पत्ति होती है। वायु जो श्वास तथा नाद के रूप में परिणत हुई है, जब वह

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

गलविवर में प्रविष्ट होती है तो उसकी योग्यता के अनुसार कौवा और तालु भी वर्णोत्पत्ति के लिये सक्रिय होते हैं। अनुनासिक वर्ण की योग्यता के होने पर कोमलतालु थोड़ा–सा नीचे झुक जाता है एवं नासिकाविवर से बाहर होने के लिए वायु को मार्ग प्रदान करता ळें

उपसंहार

वर्णों के उच्चारण के बिना मानव के ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण लोकों में लोक–व्यवहार सम्बन्धी कार्य असम्भव हो जाते हैं। वर्णोच्चारण के माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की बात को समझकर उसके अनरूप कार्य करने का प्रयत्न करता है। यह प्रक्रिया मानव के लिए ही नहीं, अपितु समस्त प्राणियों के लिए आवश्यक है। यदि किसी वर्ण के उच्चारण में प्राणवायु का प्रयोग सही तरीके से किया जाता है तो उचित परिणाम प्राप्त होते हैं। इसके विपरीत, वर्णोच्चारण के लिए निर्धारित उच्चारणांगों के साथ प्राणवायु का प्रयोग अनुचित ढंग से होने पर अनुचित परिणाम प्राप्त होते हैं।

वर्णोत्पत्ति के लिए सहायक विभिन्न उच्चारणांग प्राणवायु से सान्निध्य के कारण ही सक्रिय रहते हैं। प्राणवायु का सान्निध्य न होने पर उच्चारणांगों निष्क्रिय हो जाते हैं। जिस प्रकार मानव वर्णोच्चारण के लिए सहायक उच्चारणांगों का प्रयोग प्राणवायु के साथ करके वर्णोत्पत्ति करता है, उसी प्रकार स्वेदज, अण्डज, जरायुज प्राणी भी प्राणवायु का प्रयोग करके अव्यक्त ध्वनि का उच्चारण करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि वर्णोच्चारण में प्राणवायु को महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

i. आपिशलिशिक्षा, सम्पादक – युधिष्ठिरमीमांसक, प्रकाशक – रामलाल कपूरट्रस्ट, बहालगढ़, सोनीपत हरियाणा तृतीय संस्करण 1983

ii. सूत्रात्मकपाणिनीयशिक्षा; सम्पादक – युधिष्ठिरमीमांसक, प्रकाशक – रामलाल कपूरट्रस्ट, बहालगढ़, सोनीपत हरियाणा तृतीय संस्करण 1983

iii. व्यासशिक्षा; आचार्य श्री पट्टाभिराम शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी, 1976

iv. ऋग्वेदप्रातिशाख्य; प्रो0 वीरेन्द्र कुमार वर्मा, काशी हिन्दू विद्यापीठ, शोध संस्कृत ग्रन्थमाला 1970

v. पाणिनीयशिक्षा; डॉ0 श्रीनारायण मिश्र, प्रकाशक – चौखम्बा ओरियन्टालिया, प्रथम संस्करण 1978